जैनेंद्र कुमार की कहानियों में बाल–मन

डॉ. अनामिका जैन

शोध सारांश :

बाल–मन बहुत ही कोमल और जिज्ञासु प्रवृत्ति का होता है । नई चीजों के संबंध में जानने की उत्सुकता उसमें अपरिमित होती है । इसीलिये, आसपास के परिवेश में होने वाली हर घटना का उस पर गहरा असर पड़ता है । साथ ही, वे सिर्फ प्रेम की भाषा को ही समझते है । प्रेम के रिश्ते की सिवाय वे किसी अन्य रिश्ते को कबूल नहीं करते । जैनेंद्र कुमार ने अपनी कहानियों में बाल–चरित्र के मनोविज्ञान का बहुत ही सूक्ष्म विश्लेषण किया है । इनाम, पाजेब, खेल, कितना रुपया तथा चोर कहानी के माध्यम से हम बाल–चरित्रों के मनोभावों, हठ, जिज्ञासा, उत्सुकता, खोजी प्रवृत्ति आदि को जानने–समझने का प्रयास करेंगे ।

बीज शब्द : जैनेंद्र कुमार, कहानी, बाल–मन, बाल–मनोविज्ञान, बालक आदि ।

वस्तुतः बालमन केवल प्रेम की भाषा को समझता है । उसका मन इतना निर्मल और स्वच्छ होता है कि वह बिना किसी छल–कपट के नि:स्वार्थभाव से अपना बचपन जीता है । वह सिर्फ प्रेम का भूखा होता है; वह प्रेम उसे चाहे अपने माता–पिता से मिले अथवा अपने भाई–बंधुओं से, अपने रिश्तेदारों से अथवा अपने पड़ोसियों से । वह प्रेम के रिश्ते के सिवा किसी अन्य रिश्ते को कबूल नहीं करता ।

'बाल–मन के कुशल चितेरे' कहे जाने वाले जैनेंद्र कुमार ने बाल–चरित्र के मनोविज्ञान का जितना सूक्ष्म से सूक्ष्मतम विश्लेषण अपनी बाल–कहानियों में किया है, उतनी गंभीरता, गहनता और गूढ़ता हिंदी के बाल–कहानीकारों में आज भी अनुपस्थित है । **"नारी–पुरुष के अतिरिक्त जैनेंद्र जी ने अपनी कहानियों में बाल–चरित्रों के मनोविज्ञान का भी सूक्ष्म परिचय दिया है । खेल,पाजेब, चोर, इनाम, अपना–पराया आदि कहानियों में बाल–चरित्रों की अवतारणा कर स्पष्ट किया है कि बच्चों के व्यक्तित्व के विकास में माता–पिता का योग सर्वाधिक होता है ।"1** बाल–चरित्रों के मनोभावों की अभिवृत्ति, उसके हठ, क्रिया–प्रतिक्रिया, झूठ को स्वीकार करना, स्पर्धा, द्वंद,

प्रदर्शन, अनुकरण, उत्सुकता आदि को हम जैनेंद्र कुमार कृत कहानी इनाम, पाजेब, खेल, किसका रुपया तथा चोर कहानियों के माध्यम से समझने का प्रयास करेंगे ।

'इनाम' नामक इस कहानी में जैनेंद्र कुमार ने मनोवैज्ञानिक ढंग से बाल–जीवन के विभिन्न पहलुओं, यथा– बालक के विचार और उसके मनोभावों को अत्यंत ही सूक्ष्म एवं रोचक ढंग से उजागर किया है । बालक की सर्वप्रथम पाठशाला उसका परिवार होता है, जिसका प्रभाव बालक के दिलों–दिमाग पर पूरा–पूरा पड़ता है । इस कहानी के माध्यम से एक ऐसे ही बालक के विचार तथा उसकी प्रतिक्रिया को दर्शाया गया है, जो अपने परिवार की पारिवारिक– स्थिति तथा उसके सुख–दुख को बखूबी समझता है तथा अपने ढंग से अपने परिवार की अशांति को सुलझाने का प्रयास करता है, जिसमें उसे सफलता भी मिलती है ।

इस कहानी में परिवार की अशांति का प्रमुख कारण धनंजय के पिता का 'प्रमिला' नामक किसी दूसरी स्त्री के साथ अव्यावहारिक संबंध और उसकी मां को यह बात बर्दाश्त न होना तथा हमेशा चिड़चिड़ी एवं अन्यमनस्क रहना है, जिसके कारण वह कभी अपना गुस्सा अपने बेटे धनंजय पर निकालती है तो कभी अपने पति पर ।

कहानी की शुरुआत बालक धनंजय के सातवीं कक्षा के परिणाम निकलने से होती है, जिसमें वह अपनी कक्षा में अव्वल आता है । घर आने पर जब वह ये बात अपनी मां को बताता है तो मां हमेशा की तरह नित्यकर्मों में लगी उसकी बात को अनसुना कर देती है । बालक पुनः उत्साह के साथ बताता है तो मां रोज की तरह खाना खाने को सामने रख देती है । यहां पर मां का अपने बालक के प्रति कर्तव्य–बोध का पता चलता है । खाने के पश्चात् बालक धनंजय कर्त्तव्यपूर्वक खाने के बर्तनों को उठाकर यथास्थान रख देता है । यहां पर वह बड़े–बुजुर्गों–सा व्यवहार करता है । यह देखकर मां में मातृभावना उमड़ उठती है, परंतु तत्क्षण वह उमड़ी हुयी ममता रोष बन जाती है । मां अपने बेटे धनंजय से कहती है – **"क्यों, मेरे हाथ टूट गये हैं क्या, कि लाड़ले साहब बर्तन उठाकर चले । सुन ले, यह मेरे यहां नहीं चलेगा । ये नखरे दिखाना अपने बाप को ।"2** भोजन के पश्चात् बालक धनंजय अपनी अव्वल आने की खुशखबरी मिठाई सहित बाहर के लोगों को देना चाहता है, लेकिन मां ने सख्ती से उसे बाहर न जाने की हिदायत दे रखी है । बालक धनंजय के न मानने पर मां द्वारा उसकी अच्छी खासी मरम्मत कर देती है, क्योंकि माँ तो अपनी ही गुत्थी में उलझी हुयी है । उसे अपने बेटे के अव्वल आने पर मन–ही–मन गर्व तो है, लेकिन उसके अंदर का स्नेह और ममत्व–भाव पारिवारिक अशांति के कारण रोष, अकेलेपन और कुंठा में बदल चुका है ।

बालक धनंजय को पीटने के बाद मां को अपने किये पर पश्चाताप होता है तथा उसके पास आहिस्ते से आकर बोलती है, **"आंख खोल बेटे, क्या इनाम लेगा मां से, बता ?....दो रुपये लेगा ? अच्छा चल पांच रूपये, उठ** ।"3 और तभी अचानक पिताजी की उपस्थिति बालक धनंजय के लिये खुशी, परंतु मां के लिये तनाव व कुंठा में परिवर्तित हो जाती है । मां बालक धनंजय के पिता को देखकर अपने पांच रूपये वापस लेकर झिड़कती हुयी अंदर चली जाती है । पिता बालक धनंजय के अव्वल आने पर अत्यंत प्रसन्न होते हैं । उसी समय 'प्रमिला' के आने की आहट होती है, जिसके हाथ में रुमाल से ढकी एक तश्तरी थी । बालक धनंजय प्रमिला को देखकर उसकी ओर दौड़ता है तो प्रमिला कहती है – **"सबर तो कर, तेरे लिये ही तो यह लायी हूं । क्यों रे, कहा भी नहीं और अव्वल आ गया** ।"4 अपने परिवार में बालक धनंजय की मां को प्रमिला की उपस्थिति किसी भी रूप में स्वीकार नहीं है, क्योंकि इसे वह अपने परिवार की सुख–शांति में बाधक समझती है । कोई भी स्त्री अपने पति के किसी दूसरी स्त्री के साथ प्रेम–संबंध को कभी भी स्वीकार नहीं कर सकती और स्वयं धनंजय की मां भी इसका जीता–जागता उदाहरण है । बालक धनंजय भी इस स्थिति से अनभिज्ञ न था । जब प्रमिला उससे इनाम मांगने के लिए कहती है तो बालक धनंजय बड़े आत्मीयता से उसके गले में हाथ डाल कर बोलता है **"देखो टालना मत ! मेरा इनाम यह है कि इस घर में तुम अब से कभी मत आना । तुम मुझे प्यार करती हो न ?"5** और इसी तरह अपने पिता से भी **"इनसे कभी न मिलिये"6** इनाम के रूप में मांगता है । प्रमिला और धनंजय के पिता बात को कुछ समझ पाते कि बालक धनंजय की मां अपने बेटे की इस विवेकपूर्ण बात से स्नेह–विह्वल हो उठती है, क्योंकि इस बात मात्र से उसके मन का सारा मैल धुल जाता है । वह बालक धनंजय को स्नेह से गोद में उठा लेती है तथा प्रमिला को भी इस खुशी की मिठाई को चखने के लिये आग्रहपूर्वक कहती है । इस प्रकार बालक धनंजय अपने परिवार की अशांतिपूर्ण स्थिति को सुलझाने में सफल सिद्ध होता है ।

जैनेंद्र कुमार ने इस बाल मनोवैज्ञानिक कथा में बालक धनंजय की अत्यंत ही मासूमियतयुक्त, परंतु 'विवेकपूर्ण' उक्ति के माध्यम से पारिवारिक जीवन की अशांतिपूर्ण–स्थिति के समाधान को अत्यंत रोचक और सरल ढंग से प्रस्तुत किया है

'पाजेब' जैनेंद्र कुमार की बाल–मनोविज्ञान पर आधारित कहानी है । बाल–मन के अंतस् की सूक्ष्म विवेचना से यह सिद्ध होता है कि जैनेंद्र कुमार मानस–मन के कुशल चितेरे हैं । इस कहानी में 'संदेह' के आधार पर एक निर्दोष बालक पर मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न किया जाता है ।

इस कहानी के शीर्षक से पता चल जाता है कि कहानी के केंद्र में 'पाजेब' ही है । चार वर्ष की एक छोटी–सी बच्ची मुन्नी की 'पाजेब' की जिद्द से इस कहानी की शुरुआत होती है । बुआ द्वारा पाजेब उपहारस्वरूप प्राप्त होने पर उसे पहनकर मोहल्ले में जा–जाकर पाजेब दिखाना मुन्नी की जिद्द के पूरा होने का सूचक है । इसी बीच मुन्नी का बड़ा भाई आशुतोष भी बुआ से बाईसाइकिल की मांग करता है । उसे किसी प्रकार समझाकर कि बाईसाइकिल उपहारस्वरूप उसके जन्मदिन के अवसर पर दी जाएगी, वह मान जाता है । अपने शौक को पूरा करने के पश्चात् मुन्नी पाजेब उतार कर रख देती है और भूलवश मुन्नी के एक पैर का पाजेब बुआ के बास्केट में चली जाती है । फिर क्या था, मां द्वारा ढूंढने पर पाजेब न मिलना परिवार के सदस्यों के लिये घर बैठे विपत्ति आने के समान था । सबसे पहले शक घर के नौकर बंसी पर किया जाता है, पर जल्दी ही वह संदेह निरर्थक हो जाता है और अब बारी आती है आशुतोष की, उसे पतंग उड़ाने का बहुत शौक है । सिर्फ उसके इस शौक के कारण उस पर निरर्थक संदेह किया जाता है । पिता द्वारा निरर्थक संदेहात्मक प्रश्न पूछना उसके पुनः–पुनः चिढ़ते जाने का सूचक था । वह अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिए एक शब्द भी न बोल सका, क्योंकि बच्चे अत्यंत ही स्वाभिमानी प्रवृत्ति के होते हैं । चोरी नामक कलंक उसके लिये बर्दाश्त से बाहर था । पहले तो उसके पिता ने उससे प्रेमपूर्वक पूछा, क्योंकि उसके पिता के अनुसार, **"अपराध के प्रति करुणा ही होनी चाहिए । रोष का अधिकार नहीं है । प्रेम से ही अपराधवृत्ति को जीता जा सकता है । आतंक से उसे दबाना ठीक नहीं है । बालक का स्वभाव कोमल होता है और सदा ही उससे स्नेह से व्यवहार करना चाहिए इत्यादि ।"7** लेकिन उसकी चुप्पी के कारण उसे दोषी समझकर उसके पिता ने उसके कान खींचे तथा पीटने के पश्चात् कोठरी में बंद कर दिया । अपने साथ इतना कुछ होने पर भी स्वयं अपने को सही सिद्ध न करना उसके स्वाभिमानी प्रवृत्ति का होने का सूचक है । हद तो तब हो गई जब आशुतोष को जबरदस्ती उसके चाचा प्रकाश तथा नौकर बंसी के साथ पायल बेचने के संदेह के आधार पर पूछताछ के लिए दुकान पर भेजा जाता है । किन्तु इसी बीच बुआ का घर पर आकर यह बताना कि उस रोज भूल से एक पाजेब उसके साथ ही चली गई थी । तब आशुतोष के पिता को अपने निरर्थक संदेह पर बहुत पश्चात्ताप होता है ।

लेखक ने इस कहानी के माध्यम से यह बताना चाहा है कि अपराध के प्रति करूणा, प्रेम, दया का भाव होना चाहिए । रोष से अपराधीवृत्ति को और मनोबल मिलता है । बाल–मन इतना कोमल और स्वच्छ होता है कि उसको अपने ऊपर लगे झूठे आरोप कलंक लगते हैं, तब अपने को आरोपमुक्त करेगा उसका लक्ष्य नहीं होता, बल्कि वे मन–ही–मन रोष के कारण उस झूठे आरोप को स्वीकार कर लेते हैं । यह बाल–मन की स्वत:प्रवृत्ति

होती है । इसी कारण किसी भी निर्दोष व्यक्ति पर बिना किसी ठोस सबूत के कभी भी शक नहीं करनी चाहिये, क्योंकि इस प्रकार की निरर्थक शक ही उसके मन–मस्तिष्क पर गलत प्रभाव डालती है ।

जैनेंद्र कुमार ने **'खेल'** नामक कहानी में प्रकृति के सुरम्य वातावरण में विश्व–तत्त्व और दर्शन का सम्मिश्रण कर अबोध बाल–मन के निष्प्रयोजन कार्य के क्रियान्वयन में उठने वाली संवेदना को अनुभव किया है । इस अवस्था में बालक अपने प्रति हुये बुरे व्यवहार का बदला ठीक उसी प्रकार लेने का प्रयत्न करता है, जिस प्रकार उसके प्रति बुरा व्यवहार हुआ है और इस कहानी में भी इसी तथ्य को एक खेल के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है ।

संध्या–बेला में गंगा के निर्जन बालुका स्थल पर सात वर्षीय बालिका सुरबाला और नौ वर्षीय बालक मनोहर अपने को और विश्व को भुलाकर गंगा–तट की बालू और पानी से अपनी आत्मीयता स्थापित कर खिलवाड़ कर रहे थे । एक तरफ मनोहर गंगा–तट पर लकड़ी से पानी को उछालने में मग्न था और वहीं दूसरी तरफ सुरबाला गंगा की रेत से भाड़ बनाने में लीन थी । इस प्रकार वे गंगा–तट पर मंत्रमुग्ध होकर बाल–क्रीड़ा कर रहे थे । सुरबाला अचानक बनाते–बनाते भाड़ से बोलती है– **"मनोहर कैसा अच्छा है, पर वह दंगई बड़ा है । हमें छेड़ता भी रहता है । अबके दंगा करेगा, तो हम उसे कुटी में साझी नहीं करेंगे । साझी होने को कहेगा, तो उससे शर्त करवा लेंगे, तब साझा करेंगे ।"**[8] बालिका सोच ही रही थी कि उसे ध्यान आया कि भाड़ की छत तो बहुत गर्म रहेगी, जिस कारण मनोहर को इस भाड़ में रहने पर तक़लीफ होगी । अत: उसे अंदर न आने दूंगी और मैं स्वयं बाहर चली जाऊंगी । इस प्रकार सुरबाला के मन में मनोहर के प्रति अनुराग, रोष और अनुग्रहपूर्ण विचार उठ रहे थे । जब सुरबाला ने भाड़ बनाकर तैयार कर लिया, भाड़ के ऊपर कुटी और कुटी पर धुआं निकलने के लिये एक टेढ़ी सीक गाड़ दी तो जैसे एकबारगी वह आह्लाद से नाच उठी । उसके लिये वह भाड़ विश्व की सबसे सुंदर वस्तु के समान प्रतीत होने लगा ।

वहीं दूसरी तरफ बालक मनोहर अपने खेल से ऊबकर गंगा की तेज़ धार में लकड़ी को फेंककर आते ही सुरबाला के द्वारा निर्मित भाड़ को एक लात मारकर धराशायी कर देता है । तत्पश्चात् मनोहर अत्यंत गर्व से सुरबाला को पुकारता है, लेकिन जैसे सुरबाला ने मौन–व्रत धारण कर लिया हो । अभी तक उसके मुंह पर जहां विशुद्ध रस था, अब वहां एक सूनापन फैल गया था । इस दुख, शोक, उद्वेग, उदासी पर कहानीकार जैनेंद्र कुमार ने विश्व–तत्त्व और दर्शन के ऊपर विस्तार से चर्चा कर डाली । लेकिन इस बाल–मन का इस विश्व– तत्त्व और दर्शन की बातों से क्या सरोकार ? वे तो निर्दोष परमात्मा–खंड हैं । उनके लिये तो वह खेल ही विश्व–तत्त्व और दर्शन है । वही उनके लिये संपूर्ण संसार है । सुरबाला का इस प्रकार से मौन हो जाना मनोहर के लिये अत्यंत असहनीय था

। उसने बहुत प्रयत्न किया कि सुरबाला कुछ तो बोले, लेकिन सुरबाला ने जैसे कसम खा ली थी कुछ न बोलने की । मनोहर ने बहुत बल लगाकर कहा, **"सुरी, मनोहर तेरे पीछे खड़ा है । वह बड़ा दुष्ट है । बोल मत, पर उस पर रेत क्यों नहीं फेंक देती, मार क्यों नहीं देती ! उसे एक थप्पड़ लगा – वह अब कभी कसूर नहीं करेगा ।.... अच्छा मत देखो । मत ही देखो । मैं अब कभी सामने न आऊंगा, मैं इसी लायक हूं ।"9** इन बातों को सुनकर सुरबाला के मन से कब की व्यथा और क्रोध निकलकर समाप्त हो चुका था । अब तो उसके मन में कुछ और ही भाव थे । वह मन में उल्लास, परंतु ऊपर से क्रोध रूप को धारण किये हुये थी । दूसरे शब्दों में हम इसे स्त्री का प्रेमपूर्ण भाव भी कह सकते हैं । मनोहर भी अब हार मान चुका था, तब सुरबाला ने कहा, **"हमारा भाड़ क्यों तोड़ा जी ? हमारा भाड़ बनाकर दो ।"10** इस बात पर मनोहर ने उल्लासपूर्वक सुरबाला के निर्देशानुसार भाड़ बनाया । जैसे ही मनोहर गंगाजल से भाड़ का अभिषेक करने को हुआ, तो सुर्रो रानी ने एक लात मारकर भाड़ को चकनाचूर कर दिया । जो सुर्रो रानी अभी तक अपने द्वारा बनाये गये भाड़ के टूट जाने पर उदास थी, वही अब मनोहर द्वारा बनाये गये भाड़ को तोड़कर प्रसन्नता से नाच उठती है, साथ ही मनोहर भी उत्फुल्लता से कहकहे लगाने लगता है ।

हम इस कहानी में बाल–संवेदना को मुख्य रूप से पाते हैं । संवेदना ही वह तत्त्व है जिस कारण एक तरफ सुरबाला अपने तपते हुये भाड़ में मनोहर को आने नहीं देना चाहती, क्योंकि इसकी तपिश मनोहर के लिये असहनीय हैं और दूसरी तरफ मनोहर द्वारा बनाये गये भाड़ को सुरबाला द्वारा तोड़ दिये जाने पर भी मनोहर का खिल–खिलाकर हंसना, दोनों का एक–दूसरे के प्रति लगाव और कोमल संवेदना का ही परिणाम है । इस कहानी में सुरबाला की मनोहर के प्रति और मनोहर की सुरबाला के प्रति एक कोमल संवेदना है, जो कहानी में खेल के माध्यम से प्रस्तुत की गयी हैं ।

जैनेंद्र कुमार कृत **'किसका रुपया'** नामक कहानी में एक रुपये के खोने पर दो चरित्र उभर कर सामने आते हैं । एक चरित्र रमेश का है जो इस रुपये का असली मालिक नहीं है, उसे वह एक रुपया एक मैदान पर गिरा मिलता है और दूसरा चरित्र दस–ग्यारह साल की लड़की का है, जो असल में इस खोये हुये रुपये की मालिक है । इस कहानी में जैनेंद्र कुमार ने जहां एक चरित्र के माध्यम से रुपये मिलने पर उसके मन में उठ रही काल्पनिक उमंग को प्रस्तुत किया है तो वहीं दूसरे चरित्र के माध्यम से रुपये के खोने पर उसके बाल मस्तिष्क में बैठे मां की मार के डर और भय को प्रस्तुत किया है ।

इस कहानी में रमेश के बाल–मन के चार बिंदुओं की ओर कहानीकार ने ध्यान आकृष्ट किया है :

1. कक्षा में अव्वल और होशियार होने के बावजूद रमेश के सिर्फ गणित के दो गलत सवाल पर मास्टर जी द्वारा चपत लगाना तथा घर जल्दी आने पर मां द्वारा पूछे गये सवाल का पर्याप्त जवाब न मिलने पर मां द्वारा भी चपत लगाना – रमेश के बाल–मन को आघात पहुंचाता है । रमेश के मन में यह बात घर कर जाती है कि कोई भी उससे प्यार नहीं करता । वह अपने को बहुत ही अकेला और एकाकीपन महसूस करता है ।

2. रमेश घर से बाहर दूर मैदान में जाकर अकेला बैठ जाता है । वहां के स्निग्ध और सुंदर वातावरण को देखकर अब उसके मन में न गुस्सा था, न क्षोभ । उसके मन में न मास्टर जी के प्रति गुस्सा था, न मां के प्रति शिकायत, बस एक रीता था । तभी सामने से उसे एक पिल्ला आते हुये दिखाई देता है । उसको उस पिल्ले की अठखेलियां बहुत प्यारी लगती हैं तथा वह भी उस पिल्ले के साथ खेलना चाहता है, लेकिन पिल्ला उसके अत्यंत पास आकर वापस लौट जाता है, तो रमेश के बाल–मस्तिष्क में यह बात पुन: घर कर जाती है कि उसे कोई नहीं चाहता है ।

3. काफ़ी देर हो जाने पर लक्ष्यविहीन रमेश जब अपने घर की ओर चलता है तो उसे रास्ते मे एक रूपया मिलता है । अब उसकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता है । वह उस एक रुपए से क्या–क्या खरीदेगा ? इसकी एक काल्पनिक तस्वीर उसके बाल–मस्तिष्क में चल रही है । यहां पर कहानीकार जैनेंद्र कुमार ने बाल–मन की स्वाभाविक काल्पनिक उड़ान को प्रस्तुत किया है, जो प्रत्येक बालक में स्वाभाविक तौर पर पायी जाती है । इस अवस्था में बच्चे अक्सर गुड्डा–गुड्डी का घर–घर का अस्वाभाविक खेल खेलते हैं, जो उसकी स्वाभाविक कल्पनिकता का सूचक है ।

4.घर आने पर रमेश द्वारा मां को इस मिले हुये एक रुपये के बारे में उत्साहपूर्वक बताना, मां द्वारा वह रूपया रमेश को वापस न करना और इसी बात की गरमा–गरमी में मां द्वारा फिर से रमेश को चपत लगाना, रमेश द्वारा फिर से रूठना, मां द्वारा रमेश की तरफ उस एक रूपये को फेंकना तथा रमेश का भगवान् बुद्ध की तरह विरक्त–भाव से बाहर सड़क पर बैठना – रमेश का बाल–मस्तिक पुनः इस बात को सोचने के लिए मजबूर होता है कि कोई भी उससे प्रेम नहीं करता । यह 'प्रेम न करना' एक बालक का अपनों से दूर जाने के लिए पर्याप्त कारण हैं । इसीलिये कहा जाता है कि बच्चों को कभी भी डांट–फटकार कर नहीं, बल्कि प्यार और अपनेपन से समझाना चाहिये । यह प्यार और अपनापन ही बालक के लिये एक औषधि है ।

वहीं, दूसरी तरफ कहानीकार ने उस दस–ग्यारह साल की लड़की की मनोदशा का भी बखूबी वर्णन किया है, जो उस खोये हुये रुपये की असली मालकिन है । उसकी भयभीत अवस्था तथा बदहवासी का कारण उसकी मां की मार है ।

जैनेन्द्र कुमार ने इन दोनों मासूम बच्चों के माध्यम से बाल–मन में उठने वाली परिवार की उपेक्षा तथा मां की मार के डर का बखूबी वर्णन किया है, जो बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है ।

'चोर' नामक कहानी में जैनेंद्र कुमार ने बाल–मन की जिज्ञासा और प्रवृत्ति को प्रस्तुत किया है । बाल–मन अत्यंत ही चंचल और जिज्ञासु होता है । वह अपने आस–पास घटित होने वाली घटनाओं और परिस्थितियों को यथावत् स्वीकार नहीं करता है, बल्कि अपनी जिज्ञासा के उचित निवारण पर ही उसे स्वीकार करता है । इस कहानी में भी कहानीकार जैनेंद्र कुमार ने प्रद्युम्न नामक बालक की इसी जिज्ञासु–प्रवृत्ति को प्रस्तुत किया है ।

वैसे तो प्रद्युम्न बहुत ही शरारती और उपद्रवी बालक है, लेकिन अभी कुछ दिनों से बुजुर्ग की तरह गंभीर बना हुआ है । उसके इस व्यवहार से उसकी मां अत्यंत परेशान रहती है । वह अपने बेटे को समय से पूर्व बुजुर्ग होने नहीं देना चाहती है । वह पहले तो खेलने जाने की जिद्द करता था, लेकिन अब तो जबरदस्ती करने पर भी बड़ी मुश्किल से जाता है और समय से पूर्व ही आ जाता है । एक दिन प्रद्युम्न की मां शाम के वक्त पड़ोसियों के साथ बैठकर बातें कर रही थी कि बगल में प्रद्युम्न बैठा दिखायी दिया । उस समय बातों का विषय मंहगाई, मकान का किराया, चोरी और अंत में चोर के ऊपर चर्चा चल पड़ी । प्रद्युम्न उनकी बातों को बहुत ही गंभीरतापूर्वक सुन रहा था । घर आने पर भी उसके दिमाग में वे सारी बातें ही गूंज रही थीं । सोते वक्त उसने अपने पिता जी से चोर के विषय में जानना चाहा, लेकिन पिता जी से जिज्ञासा का उचित निवारण न मिलने पर वह मां के पास इस जिज्ञासा–सहित जाता है तो मां भी उसे अंक में भरकर सुलाने का प्रयास करती है । प्रदुम्न के दिमाग में सिर्फ एक ही बात कौंध रही थी कि **"चोर कैसा होता है ?"** 11 मां ने फुसलाते हुये जवाब दिया कि **"अरे वह सचमुच में थोड़े ही होता है । वह तो झूठ–मूठ की बात ।"**12

प्रदुम्न ने जोर देते हुये कहा कि **"मेरी किताब में राक्षस की तस्वीर है, वैसा होता है । दो सींग, गदहे के–से कान और लंबी जीभ ।"**13

"हटो, कोई चोर–वोर नहीं होता । किताब में तो यों ही तस्वीरें बनी होती है । लो अब सो जाओ ।"14 कहकर मां थपथपाने लगी और प्रदुम्न सो गया ।

कुछ दिन गुजर गये और लगता है कि प्रदुम्न के दिमाग़ से चोर को जानने की इच्छा का भूत जैसे उतर–सा गया है । दिलीप जो प्रदुम्न की मां का भतीजा है, उनके साथ ही रहकर एफ. ए. की पढ़ाई कर रहा है । एक दिन दिलीप कॉलेज से लौटकर अपनी चाची (प्रदुम्न की मां) को बताता है कि **"चाची, एक चोर पकड़ा गया है, चोर । बाहर गली में सिपाही उसे ले जा रहे थे । सच्ची चाची ।"15** दिलीप की बातों को सुनकर जैसे प्रदुम्न अपना खाना छोड़कर पागलों की तरह सड़क पर चोर को देखने के लिये भागने लगता है । प्रदुम्न की मां दिलीप को उसको पकड़कर लाने का आदेश देती हैं । दिलीप और प्रदुम्न के वापस आने पर दिलीप जितना उल्लसित दिखायी देता है, प्रदुम्न उतना ही चिंतित । दिलीप सुनी–सुनायी बातों का वर्णन कर रहा था कि प्रदुम्न सहसा बीच में ही बोल उठता है कि चोर आदमी होता है । राक्षस नहीं होता, तो अब से किवाड़ बंद करके रखने की कोई जरूरत नहीं है । प्रदुम्न की बातों को सुनकर प्रदुम्न की मां महसूस करती है कि इतने छोटे–से बालक में अपने पिता के ही लक्षण हैं ।

जैनेंद्र कुमार ने इस कहानी में एक बच्चे के माध्यम से इस तरह के सद्–विचारों को प्रस्तुत करके चोर द्वारा कृत इस घृणित कार्य का परित्याग कर सच्चाई के मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित करने का प्रयास किया है, क्योंकि घृणा अपराध से करनी चाहिये, अपराधी से नहीं । बाल–मन इतना स्वच्छ और कोमल होता है कि उसके मन में किसी के प्रति बुरे भाव आ ही नहीं सकते, वह चाहे चोर ही क्यों न हो । यह मानवीय संस्कार ही है, जो हमें किसी के प्रति घृणा के भाव आने ही नहीं देता ।

इसी प्रकार जैनेंद्र कुमार ने अपनी अन्य बाल–कहानियों – 'फोटोग्राफी', 'अपना–पराया', 'तमाशा', 'दिल्ली में', 'दो चिड़िया', 'बिल्ली–बच्चा', 'रामू की दादी', 'अपना–अपना भाग्य', 'पढ़ाई' आदि में भी बालमन के विभिन्न मनोभावों को बहुत ही यथार्थ ढंग से दर्शाया है ।

संदर्भ–सूची :

1. गोयल, उषा : हिंदी कहानी : चरित्र–चित्रण का विकास, रोहतक रोड़, दिल्ली, 1981, पृ.133 ।

2.जैन, निर्मला (संपा.) : जैनेन्द्र रचनावली : खंड – 4, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2008, कहानी : इनाम, पृ. 158 ।

3. वही, पृ. 160–161 ।

4. वही, पृ. 161 ।

5. वही, पृ. 162 ।

6. वही, पृ. 162 ।

7. कहानी : पाजेब, पृ. 166 ।

8. कहानी : खेल, पृ. 195 ।

9. वही, पृ. 198 ।

10. वही, पृ. 198 ।

11. कहानी : चोर, पृ. 211 ।

12. वही, पृ. 211 ।

13. वही, पृ. 212 ।

14. वही, पृ. 212 ।

15. वही, पृ. 212 ।

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, जैन कन्या पाठशाला पी.जी. कॉलेज, मेरठ रोड, मुजफ्फरनगर

E mail id : jainanamika84@gmail.com मो. 9643431980